INTERNATIONAL JOURNAL OF NOVEL RESEARCH AND DEVELOPMENT (IJNRD)
© 2026 IJNRD | Volume 11, Issue 1, January 2026 | ISSN: 2456-4184 | IJNRD.ORG

दीनदयाल उपाध्याय के विचारों में शिक्षा और "कर्तव्य–बोध" का संबंध

पर्यवेक्षक / सह.पर्यवेक्षक
प्रोफेसर डॉ. राज कमल मिश्रा
डॉ. जय प्रताप सिंह
महाराजा विनायक ग्लोबल यूनिवर्सिटी
जयपुर, राजस्थान

शोधार्थी
मोनिका शर्मा
पीएच. डी. छात्रा

सारांश :

पंडित दीनदयाल उपाध्याय का शैक्षिक दर्शन केवल ज्ञान और सूचना के संचय तक सीमित नहीं था, बल्कि यह कर्तव्य बोध और मूल्य आधारित शिक्षा पर केंद्रित था। उनका मानना था कि शिक्षा का उद्देश्य व्यक्ति को सामाजिक, नैतिक और सांस्कृतिक जिम्मेदारियों के प्रति सजग बनाना है। उपाध्याय की एकात्म मानववाद की अवधारणा यह बताती है कि शिक्षा का विकास व्यक्ति के समग्र व्यक्तित्व और समाज के हित के साथ होना चाहिए। उन्होंने शिक्षा को चरित्र निर्माण और सामाजिक उत्तरदायित्व के उपकरण के रूप में देखा। उनके अनुसार सच्ची शिक्षा वह है जो व्यक्ति में स्वार्थ से ऊपर उठकर कर्तव्य निष्ठा, अनुशासन और सेवा भाव का विकास करे। उन्होंने यह भी रेखांकित किया कि आधुनिक शिक्षा केवल तकनीकी और पेशेवर कौशल तक सीमित रह जाए, तो वह समाज के नैतिक और सांस्कृतिक मूल्यों को कमजोर कर सकती है। उपाध्याय के विचार आज के परिप्रेक्ष्य में शिक्षा नीति, शिक्षक प्रशिक्षण और नैतिक शिक्षा पाठ्यक्रमों के लिए मार्गदर्शक सिद्ध होते हैं। उनके दृष्टिकोण के अनुसार शिक्षा का अंतिम लक्ष्य केवल रोजगार या ज्ञान नहीं, बल्कि कर्तव्य बोध और राष्ट्र सेवा की भावना विकसित करना है।

मुख्य शब्द :

पंडित दीनदयाल उपाध्याय, शिक्षा दर्शन, कर्तव्य बोध, एकात्म मानववाद, मूल्य आधारित शिक्षा, समाज और शिक्षा, नैतिक शिक्षा, चरित्र निर्माण, भारतीय संस्कृति, सामाजिक उत्तरदायित्व

भूमिका :

भारतीय चिंतन परंपरा में शिक्षा को केवल जीविका अर्जन का साधन नहीं, बल्कि मनुष्य के सर्वांगीण विकास का माध्यम माना गया है। इसी परंपरा को आधुनिक संदर्भों में पुनः प्रतिष्ठित करने का कार्य पंडित दीनदयाल उपाध्याय ने किया। वे केवल एक राजनीतिक विचारक नहीं थे, बल्कि एक ऐसे दार्शनिक चिंतक थे जिन्होंने भारतीय समाज की आत्मा को समझते हुए शिक्षा, संस्कृति, राष्ट्र और कर्तव्य के आपसी संबंधों को स्पष्ट किया। दीनदयाल उपाध्याय के विचारों में शिक्षा और कर्तव्य–बोध का संबंध अत्यंत गहरा, जैविक और नैतिक है। उनके अनुसार शिक्षा का उद्देश्य केवल ज्ञान देना नहीं, बल्कि व्यक्ति में कर्तव्य–भावना का विकास करना है, जिससे वह समाज, राष्ट्र और मानवता के प्रति उत्तरदायी बन सके।

दीनदयाल उपाध्याय : संक्षिप्त वैचारिक परिचय

पंडित दीनदयाल उपाध्याय (1916–1968) आधुनिक भारत के प्रमुख राष्ट्रवादी चिंतकों में से एक थे। उन्होंने एकात्म मानववाद का सिद्धांत प्रस्तुत किया, जो भारतीय दर्शन, संस्कृति और सामाजिक यथार्थ पर आधारित था। उनका चिंतन पश्चिमी भौतिकवाद और समाजवादी आर्थिक दृष्टिकोण दोनों से अलग था। वे मानते थे कि भारतीय समाज की समस्याओं का समाधान भारतीय मूल्यों, जीवन–दृष्टि और कर्तव्य–केंद्रित सोच से ही संभव है।

शिक्षा की अवधारणा : दीनदयाल उपाध्याय का दृष्टिकोण

1. शिक्षा केवल सूचना नहीं, संस्कार है :

दीनदयाल उपाध्याय के अनुसार शिक्षा का अर्थ केवल पुस्तकीय ज्ञान या तकनीकी दक्षता प्राप्त करना नहीं है। वे शिक्षा को संस्कार निर्माण की प्रक्रिया मानते थे।

उनका मानना था कि —

"यदि शिक्षा मनुष्य को कर्तव्यशील नहीं बनाती, तो वह समाज के लिए उपयोगी नहीं रह जाती।"

इस दृष्टि से शिक्षा का लक्ष्य चरित्र निर्माण, आत्मसंयम, सेवा—भाव और नैतिक चेतना का विकास होना चाहिए।

2. भारतीय शिक्षा परंपरा और कर्तव्य :

प्राचीन भारतीय शिक्षा व्यवस्था में गुरु—शिष्य परंपरा के अंतर्गत शिक्षा का मुख्य उद्देश्य धर्म, कर्तव्य और जीवन—मूल्यों की समझ विकसित करना था। दीनदयाल उपाध्याय मानते थे कि आधुनिक शिक्षा प्रणाली ने इस परंपरा से विच्छेद कर लिया है और शिक्षा को केवल रोजगार—केंद्रित बना दिया है।

उनके अनुसार यह विच्छेद समाज में —

1. स्वार्थपरकता :

आधुनिक समाज में स्वार्थपरकता एक गंभीर सामाजिक समस्या के रूप में उभरकर सामने आई है। व्यक्ति आज अपने व्यक्तिगत लाभ, सुख और सफलता को ही जीवन का अंतिम लक्ष्य मानने लगा है। शिक्षा और सामाजिक संरचना में आए परिवर्तन ने इस प्रवृत्ति को और अधिक बढ़ावा दिया है। जब शिक्षा का उद्देश्य केवल रोजगार, पद और आर्थिक उन्नति तक सीमित हो जाता है, तब व्यक्ति समाज और राष्ट्र के प्रति अपने दायित्वों को भूलने लगता है। स्वार्थपरक दृष्टिकोण व्यक्ति को संकीर्ण सोच की ओर ले जाता है, जहाँ वह केवल "मैं" और "मेरा" तक ही सीमित रह जाता है। इसका परिणाम यह होता है कि सामाजिक सहयोग, त्याग और सेवा—भाव जैसे मूल्य कमजोर पड़ जाते हैं। पारिवारिक और सामाजिक संबंध भी औपचारिकता तक सिमट जाते हैं। स्वार्थपरकता के कारण व्यक्ति समाज की समस्याओं के प्रति उदासीन हो जाता है और सामूहिक हितों के बजाय निजी हितों को प्राथमिकता देता है। यह प्रवृत्ति सामाजिक एकता और सामंजस्य के लिए घातक सिद्ध होती है। स्पष्ट है कि स्वार्थपरकता केवल व्यक्ति को ही नहीं, बल्कि पूरे समाज को नैतिक और सामाजिक रूप से कमजोर बनाती है।

2. नैतिक पतन :

नैतिक पतन आधुनिक समाज की एक गहरी और चिंताजनक समस्या है। नैतिक मूल्यों का ह्रास व्यक्ति के आचरण, विचार और व्यवहार में स्पष्ट रूप से दिखाई देता है। आज सफलता की परिभाषा केवल धन, पद और प्रतिष्ठा तक सीमित हो गई है, जिससे नैतिकता को पीछे छोड़ दिया गया है। ईमानदारी, सत्य, कर्तव्यनिष्ठा और आत्मसंयम जैसे मूल्य जीवन से धीरे—धीरे लुप्त होते जा रहे हैं। शिक्षा प्रणाली में नैतिक शिक्षा के अभाव ने इस समस्या को और गंभीर बना दिया है। परिणामस्वरूप व्यक्ति नैतिक और अनैतिक के अंतर को समझने में असमर्थ होता जा रहा है। नैतिक पतन के कारण समाज में भ्रष्टाचार, छल, कपट और अन्याय जैसी प्रवृत्तियाँ बढ़ती हैं। व्यक्ति अपने स्वार्थ की पूर्ति के लिए अनुचित साधनों को अपनाने से भी नहीं हिचकिचाता। इससे सामाजिक विश्वास और पारदर्शिता समाप्त होने लगती है। जब नैतिक मूल्यों का क्षय होता है, तब समाज की नींव कमजोर पड़ जाती है। इसलिए नैतिक पतन केवल व्यक्तिगत समस्या नहीं, बल्कि संपूर्ण सामाजिक व्यवस्था के लिए एक गंभीर चुनौती है।

3. सामाजिक उत्तरदायित्व की कमी :

सामाजिक उत्तरदायित्व की कमी आज के समाज की एक प्रमुख समस्या बन चुकी है। व्यक्ति स्वयं को समाज से अलग मानने लगा है और अपने कर्तव्यों के प्रति उदासीन हो गया है। अधिकारों के प्रति जागरूकता बढ़ी है, लेकिन कर्तव्यों की भावना कमजोर होती जा रही है। सामाजिक उत्तरदायित्व का अर्थ है समाज, राष्ट्र और मानवता के प्रति अपनी भूमिका को समझना और उसका ईमानदारी से निर्वहन करना।

किंतु आधुनिक जीवन–शैली और व्यक्तिवादी सोच ने इस भावना को कमजोर कर दिया है। लोग सामाजिक समस्याओं, जैसे गरीबी, अशिक्षा, स्वच्छता और पर्यावरण संरक्षण के प्रति उदासीन रहते हैं। जब व्यक्ति सामाजिक उत्तरदायित्व से विमुख हो जाता है, तब समाज में असमानता, असंतुलन और अव्यवस्था बढ़ती है। सामूहिक प्रयासों के अभाव में सामाजिक विकास बाधित होता है। सामाजिक उत्तरदायित्व की कमी का मुख्य कारण मूल्य–आधारित शिक्षा का अभाव भी है। जब शिक्षा व्यक्ति में संवेदनशीलता और कर्तव्य–बोध का विकास नहीं करती, तब वह केवल अपने हितों तक सीमित रह जाता है। स्पष्ट है कि सामाजिक उत्तरदायित्व के बिना एक स्वस्थ और सशक्त समाज की कल्पना नहीं की जा सकती।

कर्तव्य–बोध की अवधारणा

1. अधिकार से पहले कर्तव्य :

दीनदयाल उपाध्याय के चिंतन की एक प्रमुख विशेषता यह है कि वे कर्तव्य को अधिकार से ऊपर रखते हैं। उनका कहना था कि यदि प्रत्येक व्यक्ति अपने कर्तव्य का पालन करे, तो अधिकारों की मांग अपने–आप निरर्थक हो जाती है। यह दृष्टिकोण पश्चिमी विचारधारा से भिन्न है, जहाँ अधिकारों पर अधिक बल दिया गया है।

2. कर्तव्य और समाज :

उनके अनुसार मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है और उसका अस्तित्व समाज से जुड़ा हुआ है। इसलिए –

1. परिवार के प्रति कर्तव्य :

परिवार समाज की सबसे छोटी और महत्वपूर्ण इकाई है, जहाँ से व्यक्ति के संस्कारों और मूल्यों का विकास प्रारंभ होता है। परिवार के प्रति कर्तव्य का अर्थ है माता–पिता, भाई–बहन और अन्य सदस्यों के प्रति सम्मान, सहयोग और उत्तरदायित्व की भावना रखना। माता–पिता का आदर, उनकी सेवा और आज्ञा–पालन भारतीय संस्कृति की मूल विशेषता रही है। इसके साथ ही परिवार के अन्य सदस्यों के सुख–दुख में सहभागिता निभाना भी व्यक्ति का नैतिक कर्तव्य है। आधुनिक समय में व्यक्तिवादी सोच और व्यस्त जीवन–शैली के कारण पारिवारिक कर्तव्यों की उपेक्षा देखी जा रही है, जिससे पारिवारिक संबंधों में तनाव और विघटन बढ़ रहा है। परिवार के प्रति कर्तव्य केवल भावनात्मक नहीं, बल्कि नैतिक और सामाजिक भी होता है। यह व्यक्ति में सहनशीलता, त्याग और जिम्मेदारी जैसे गुणों का विकास करता है। जब व्यक्ति अपने परिवार के प्रति कर्तव्यनिष्ठ होता है, तब वह सामाजिक जीवन में भी संतुलित और संवेदनशील व्यवहार करता है। स्पष्ट है कि परिवार के प्रति कर्तव्यबोध व्यक्ति के चरित्र निर्माण और समाज की स्थिरता के लिए अत्यंत आवश्यक है।

2. समाज के प्रति कर्तव्य :

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है और उसका अस्तित्व समाज के बिना संभव नहीं है। समाज के प्रति कर्तव्य का अर्थ है सामाजिक नियमों का पालन करना, दूसरों के अधिकारों का सम्मान करना और सामूहिक कल्याण में योगदान देना। समाज व्यक्ति को पहचान, सुरक्षा और विकास के अवसर प्रदान करता है, इसलिए व्यक्ति का यह नैतिक दायित्व बनता है कि वह समाज के हितों को प्राथमिकता दे। सामाजिक कर्तव्यों में आपसी सहयोग, सहिष्णुता, भाईचारा और सामाजिक सेवा का महत्वपूर्ण स्थान है। आज समाज में बढ़ती स्वार्थपरकता और असहिष्णुता के कारण सामाजिक कर्तव्यों की भावना कमजोर होती जा रही है। लोग समाज की समस्याओं से स्वयं को अलग रखने लगे हैं। इससे सामाजिक असमानता और अव्यवस्था को बढ़ावा मिलता है। समाज के प्रति कर्तव्यनिष्ठ व्यक्ति सामाजिक सुधार, जागरूकता और समरसता में सक्रिय भूमिका निभाता है। वह अन्याय, भेदभाव और शोषण के विरुद्ध आवाज उठाता है। इस प्रकार समाज के प्रति कर्तव्य न केवल सामाजिक संतुलन बनाए रखने में सहायक होता है, बल्कि एक न्यायपूर्ण और मानवीय समाज की स्थापना में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

3. राष्ट्र के प्रति कर्तव्य :

राष्ट्र के प्रति कर्तव्य नागरिक का सर्वोच्च दायित्व माना जाता है। राष्ट्र केवल भौगोलिक सीमा नहीं, बल्कि साझा संस्कृति, इतिहास और मूल्यों का प्रतीक होता है। प्रत्येक नागरिक का कर्तव्य है कवह

राष्ट्र की एकता, अखंडता और संप्रभुता की रक्षा करे। संविधान और कानूनों का पालन करना, राष्ट्रीय संपत्ति की सुरक्षा करना तथा सामाजिक सद्भाव बनाए रखना राष्ट्र के प्रति कर्तव्य के महत्वपूर्ण अंग हैं। इसके अतिरिक्त ईमानदारी से अपने कार्य का निर्वहन करना और राष्ट्र के विकास में योगदान देना भी नागरिक का दायित्व है। आज अधिकारों की चर्चा अधिक होती है, किंतु राष्ट्र के प्रति कर्तव्यों की उपेक्षा देखने को मिलती है। यह प्रवृत्ति राष्ट्रीय चेतना को कमजोर करती है। राष्ट्र के प्रति कर्तव्यबोध व्यक्ति में देशभक्ति, अनुशासन और त्याग की भावना विकसित करता है। जब नागरिक अपने कर्तव्यों के प्रति जागरूक होते हैं, तब राष्ट्र सशक्त और आत्मनिर्भर बनता है। इसलिए राष्ट्र के प्रति कर्तव्य केवल भावना नहीं, बल्कि सक्रिय और जिम्मेदार नागरिकता की अभिव्यक्ति है।

सम्बन्धित साहित्य :

Chandana Banerjee & Dr- Mamta Rani — Journal of Advances and Scholarly Researches in Allied Education (Ignited Minds Journal)

इस शोध "समकालीन भारत के संदर्भ में पंडित दीनदयाल उपाध्याय की शैक्षिक अवधारणा की एक परीक्षा" में लिखा गया है कि उपाध्याय का शैक्षिक दर्शन भारतीय मूल्य–आधारित शिक्षा प्रणाली, व्यक्ति के समग्र विकास, सांस्कृतिक मूल्यों के समावेश और पारंपरिक तथा आधुनिक ज्ञान प्रणालियों के एकीकरण पर केंद्रित है। अध्ययन बताता है कि उनकी शिक्षा दृष्टि मूल्यों, नैतिकता और कर्तव्य–बोध को शिक्षा का मूल उद्देश्य मानती है, जो भारत की समकालीन शिक्षा चुनौतियों के समाधान में एक ढांचा प्रदान कर सकती है।

"लोकतान्त्रिक भारत की शिक्षा में पण्डित दीनदयाल उपाध्याय जी के शैक्षिक विचारों का अध्ययन" — Idealistic Journal of Advanced Research in Progressive Spectrum (IJARPS)

इस शोध में पाया गया है कि दीनदयाल उपाध्याय के अनुसार शिक्षा प्रत्येक व्यक्ति का जन्मसिद्ध अधिकार है और उसे समाज द्वारा सुनिश्चित, सर्वसमावेशी तथा निःशुल्क बनाना चाहिए। उनका मानना था कि शिक्षा का विधेयक यदि बाजार–केन्द्रित हो जाए, तो समाज के नैतिक व सांस्कृतिक मूल्यों को क्षति पहुँचती है। शोध यह भी रेखांकित करता है कि शिक्षा के माध्यम से व्यक्ति में कर्तव्य–बोध, अनुशासन और नैतिक मूल्य विकसित होते हैं, जो लोकतांत्रिक और समावेशी समाज निर्माण में सहायक हैं।

Renu Sharma — International Journal of Innovations in Science, Engineering and Management

लेख "वैदिक सामाजिक सौहार्द के समन्वयक – पण्डित दीनदयाल उपाध्याय" मुख्यतः उपाध्याय की एकात्म मानववाद दर्शन पर केंद्रित है। इसमें स्पष्ट किया गया है कि उनका शैक्षिक दृष्टिकोण भारतीय संस्कृति, सामाजिक समरसता और आत्म–निर्भरता जैसे मूल्यों से प्रेरित था। अध्ययन दिखाता है कि शिक्षा को केवल कौशल या तकनीकी ज्ञान नहीं बल्कि मूल्यों, सामाजिक समझ और कर्तव्य–प्रेरणा का माध्यम माना गया। इस जांच में शिक्षा–कर्तव्य की अभिव्यक्ति सामाजिक सौहार्द और मानव–एकत्व के संदर्भ में स्पष्ट होती है।

Prakriti / अन्य शोध (ऑनलाइन संग्रह) – कई अन्य शोध तथा प्रकाशित विश्लेषण (जैसे researchgatee &archives) संकेत करते हैं कि उपाध्याय शिक्षा को समाज की संस्कृति, स्वावलंबन और नैतिकता से जोड़ते थे, शिक्षक–छात्र संबंध, अनुशासन तथा सामाजिक कर्तव्य की भावना को शिक्षा का मूल तत्त्व मानते थे। शिक्षा में भारतीय दर्शन तथा जीवन मूल्यों का समावेश उनकी विचारधारा का अपरिहार्य अंग था, जिससे व्यक्ति में कर्तव्य–बोध और सामाजिक उत्तरदायित्व का विकास हो।

अतिरिक्त शैक्षिक समीक्षाएँ (अन्य जर्नल/पेपर) – जहां तक उपलब्ध जर्नल लेखों/पार्ट बेस्ट शोधों का संबंध है, उपाध्याय के एकात्म मानववाद, मूल्य–आधारित शिक्षा और समाज–निर्माण के लिए शिक्षा की भूमिका पर कई लेख प्रकाशित हैं। इनका तर्क है कि शिक्षा केवल ज्ञान–अर्जन नहीं, बल्कि चरित्र और कर्तव्य–बोध का निर्माण भी होनी चाहिए, जो व्यक्ति को समाज–सेवा तथा राष्ट्र–निर्माण की ओर प्रेरित करे।

शिक्षा और कर्तव्य–बोध का अंतर्संबंध

1. शिक्षा कर्तव्य–बोध की जननी है :

दीनदयाल उपाध्याय मानते थे कि कर्तव्य–बोध स्वाभाविक नहीं होता, उसे विकसित करना पड़ता है, और यह कार्य शिक्षा के माध्यम से ही संभव है।
यदि शिक्षा सही दिशा में दी जाए, तो व्यक्ति में :

1. आत्मानुशासन

आत्मानुशासन व्यक्ति के चरित्र निर्माण का मूल आधार है। इसका अर्थ है अपने विचारों, इच्छाओं और व्यवहार पर नियंत्रण रखना तथा कर्तव्य के अनुरूप आचरण करना। आत्मानुशासित व्यक्ति बाहरी नियंत्रण के बिना भी सही और गलत के अंतर को समझते हुए अपने कार्यों का संचालन करता है। यह गुण शिक्षा और संस्कारों के माध्यम से विकसित होता है। आधुनिक समाज में स्वतंत्रता की गलत व्याख्या के कारण आत्मानुशासन का महत्व कम आँका जाने लगा है, जिससे अव्यवस्था और असंतुलन उत्पन्न हो रहा है। आत्मानुशासन व्यक्ति को संयम, धैर्य और कर्तव्यनिष्ठा सिखाता है। यह उसे कठिन परिस्थितियों में भी विचलित होने से बचाता है और लक्ष्य की ओर निरंतर अग्रसर होने की शक्ति प्रदान करता है। आत्मानुशासन के अभाव में व्यक्ति अनुशासनहीनता, स्वेच्छाचार और अनैतिकता की ओर बढ़ता है। व्यक्तिगत जीवन के साथ–साथ सामाजिक और राष्ट्रीय जीवन में भी आत्मानुशासन की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण है। एक आत्मानुशासित नागरिक ही समाज और राष्ट्र के प्रति अपने दायित्वों का ईमानदारी से निर्वहन कर सकता है।

2. सामाजिक संवेदना :

सामाजिक संवेदना मानव समाज को मानवीय और जीवंत बनाए रखने का प्रमुख तत्व है। इसका अर्थ है दूसरों के दुख–सुख को समझना, उनके प्रति सहानुभूति रखना और आवश्यकता पड़ने पर सहायता के लिए तत्पर रहना। सामाजिक संवेदना व्यक्ति को केवल अपने तक सीमित नहीं रहने देती, बल्कि उसे समाज से भावनात्मक रूप से जोड़ती है। आज के भौतिकवादी और प्रतिस्पर्धात्मक युग में सामाजिक संवेदना का ह्रास एक गंभीर चिंता का विषय बन गया है। लोग अपने व्यक्तिगत हितों में इतने व्यस्त हो गए हैं कि समाज की पीड़ा से उनका सरोकार कम होता जा रहा है। सामाजिक संवेदना के अभाव में असमानता, शोषण और सामाजिक विभाजन बढ़ता है। शिक्षा का उद्देश्य केवल बौद्धिक विकास ही नहीं, बल्कि सामाजिक संवेदनशीलता का विकास भी होना चाहिए। संवेदनशील व्यक्ति समाज की समस्याओं के प्रति जागरूक रहता है और उनके समाधान में सक्रिय भूमिका निभाता है। सामाजिक संवेदना आपसी सहयोग, सहिष्णुता और भाईचारे को बढ़ावा देती है, जिससे समाज अधिक संतुलित और न्यायपूर्ण बनता है।

3. राष्ट्रभक्ति :

राष्ट्रभक्ति नागरिक के भीतर राष्ट्र के प्रति प्रेम, निष्ठा और समर्पण की भावना को दर्शाती है। यह केवल भावनात्मक लगाव नहीं, बल्कि राष्ट्र के हित में कर्तव्यनिष्ठ आचरण की प्रेरणा है। राष्ट्रभक्ति का वास्तविक स्वरूप तब प्रकट होता है जब व्यक्ति राष्ट्र की एकता, अखंडता और सम्मान के लिए अपने व्यक्तिगत हितों को पीछे रखता है। आज राष्ट्रभक्ति को प्रायः केवल नारों या प्रतीकों तक सीमित कर दिया जाता है, जबकि इसका वास्तविक अर्थ जिम्मेदार नागरिकता से जुड़ा हुआ है। संविधान और कानूनों का पालन करना, सामाजिक सद्भाव बनाए रखना और राष्ट्रीय संपत्ति की रक्षा करना राष्ट्रभक्ति के महत्वपूर्ण रूप हैं। राष्ट्रभक्त नागरिक राष्ट्र की समस्याओं के प्रति जागरूक रहता है और उनके समाधान में योगदान देता है। शिक्षा के माध्यम से राष्ट्रभक्ति का विकास अत्यंत आवश्यक है, ताकि व्यक्ति में राष्ट्रीय चेतना और कर्तव्य–बोध उत्पन्न हो सके। सच्ची राष्ट्रभक्ति राष्ट्र को सशक्त, एकजुट और प्रगतिशील बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है।

4. सेवा–भाव :

सेवा–भाव मानव जीवन को सार्थक बनाने वाला एक उच्च नैतिक मूल्य है। इसका अर्थ है बिना किसी स्वार्थ के दूसरों के कल्याण के लिए कार्य करना। सेवा–भाव व्यक्ति को आत्मकेंद्रितता से बाहर

निकालकर समाज के प्रति उत्तरदायी बनाता है। भारतीय संस्कृति में सेवा को धर्म के समान महत्व दिया गया है। आज के समय में जब स्वार्थपरकता और भोगवाद बढ़ रहे हैं, तब सेवा–भाव का महत्व और भी अधिक बढ़ जाता है। सेवा–भाव से प्रेरित व्यक्ति समाज के कमजोर और वंचित वर्गों के प्रति संवेदनशील रहता है और उनकी सहायता के लिए आगे आता है। शिक्षा यदि सेवा–भाव का विकास करे, तो वह समाज में सकारात्मक परिवर्तन ला सकती है। सेवा–भाव सामाजिक समरसता, सहयोग और मानवीय मूल्यों को सुदृढ़ करता है। यह व्यक्ति में करुणा, त्याग और उदारता जैसे गुणों का विकास करता है। सेवा–भाव से युक्त समाज ही वास्तव में सशक्त, संतुलित और नैतिक रूप से समृद्ध समाज बन सकता है।
स्वतः विकसित हो जाते हैं।

2. मूल्यहीन शिक्षा का संकट :
उन्होंने चेतावनी दी थी कि मूल्य–विहीन शिक्षा समाज के लिए घातक सिद्ध हो सकती है।
ऐसी शिक्षा :
✓ कुशल लेकिन संवेदनहीन व्यक्ति
✓ तकनीकी रूप से सक्षम लेकिन नैतिक रूप से रिक्त समाज
✓ कर्तव्यहीन नागरिक का निर्माण करती है।

एकात्म मानववाद और शिक्षा
1. मनुष्य का समग्र विकास
एकात्म मानववाद के अनुसार मनुष्य केवल शरीर या बुद्धि नहीं, बल्कि :
1. शरीर
शरीर मानव जीवन का भौतिक आधार है, जिसके माध्यम से व्यक्ति अपने कर्तव्यों का निर्वहन करता है। स्वस्थ शरीर व्यक्ति को कार्यशील, अनुशासित और सक्रिय बनाता है। दीनदयाल उपाध्याय के विचारों में शरीर की उपेक्षा नहीं, बल्कि उसका संतुलित पोषण और संरक्षण आवश्यक माना गया है। शारीरिक स्वास्थ्य के बिना मानसिक स्थिरता और सामाजिक कर्तव्य दोनों प्रभावित होते हैं।

2. मन
मन मानव की भावनाओं, इच्छाओं और संवेदनाओं का केंद्र होता है। यह व्यक्ति के व्यवहार और दृष्टिकोण को दिशा देता है। दीनदयाल उपाध्याय के अनुसार शिक्षा का उद्देश्य मन को संयमित और संवेदनशील बनाना होना चाहिए। जब मन संतुलित होता है, तभी व्यक्ति में करुणा, सहनशीलता और सामाजिक उत्तरदायित्व की भावना विकसित होती है।
3. बुद्धि
बुद्धि विवेक, तर्क और निर्णय की शक्ति है, जो व्यक्ति को सही और गलत के बीच अंतर करना सिखाती है। दीनदयाल उपाध्याय मानते थे कि बुद्धि का विकास केवल तकनीकी ज्ञान तक सीमित नहीं होना चाहिए। नैतिक विवेक से युक्त बुद्धि ही व्यक्ति को कर्तव्यनिष्ठ, न्यायप्रिय और समाजोपयोगी बनाती है।

4. आत्मा
आत्मा मानव अस्तित्व का आध्यात्मिक आधार है, जो उसे जीवन का उद्देश्य और दिशा प्रदान करती है। दीनदयाल उपाध्याय के एकात्म मानववाद में आत्मा का विशेष महत्व है। आत्मिक चेतना व्यक्ति को स्वार्थ से ऊपर उठाकर सेवा, त्याग और कर्तव्य के मार्ग पर अग्रसर करती है।
का समन्वित स्वरूप है।
शिक्षा का कार्य इन चारों का संतुलित विकास करना है। यही संतुलन कर्तव्य–बोध को जन्म देता है।

2. समाज और राष्ट्र के प्रति उत्तरदायित्व

दीनदयाल उपाध्याय के अनुसार शिक्षा व्यक्ति को केवल "स्वयं के लिए" नहीं, बल्कि "सबके लिए" जीना सिखाती है। यही दृष्टि व्यक्ति को कर्तव्यनिष्ठ नागरिक बनाती है।

आधुनिक संदर्भ में दीनदयाल उपाध्याय के विचारों की प्रासंगिकता

1. नैतिक संकट का समाधान

आज की शिक्षा प्रणाली में :

- ✓ प्रतिस्पर्धा
- ✓ उपभोक्तावाद
- ✓ व्यक्तिगत सफलता

पर अत्यधिक बल है।

दीनदयाल उपाध्याय का कर्तव्य—केंद्रित शिक्षा मॉडल इस नैतिक संकट का समाधान प्रस्तुत करता है।

2. राष्ट्र निर्माण में शिक्षा की भूमिका

उनके अनुसार राष्ट्र केवल भौगोलिक इकाई नहीं, बल्कि सांस्कृतिक चेतना है। शिक्षा यदि राष्ट्र—भावना और कर्तव्य—बोध से युक्त हो, तो वही सशक्त राष्ट्र का निर्माण कर सकती है।

शिक्षा में शिक्षक की भूमिका

दीनदयाल उपाध्याय शिक्षक को केवल ज्ञानदाता नहीं, बल्कि चरित्र—निर्माता मानते थे। शिक्षक का आचरण, जीवन—शैली और कर्तव्यनिष्ठा विद्यार्थियों के लिए प्रेरणा का स्रोत होती है।

निष्कर्ष

दीनदयाल उपाध्याय के विचारों में शिक्षा और कर्तव्य—बोध एक—दूसरे से पृथक नहीं, बल्कि परस्पर पूरक हैं।

उनके अनुसार :—

1. शिक्षा बिना कर्तव्य के अधूरी है :

शिक्षा का वास्तविक उद्देश्य केवल ज्ञान और कौशल प्रदान करना नहीं, बल्कि व्यक्ति को कर्तव्यनिष्ठ नागरिक बनाना है। यदि शिक्षा में कर्तव्य—बोध का समावेश नहीं होता, तो वह अधूरी और दिशाहीन रह जाती है। ऐसी शिक्षा व्यक्ति को केवल अपने हितों तक सीमित कर देती है और समाज के प्रति उत्तरदायित्व की भावना विकसित नहीं कर पाती। परिणामस्वरूप शिक्षित व्यक्ति भी स्वार्थपरक, संवेदनहीन और नैतिक रूप से कमजोर हो सकता है। इसलिए शिक्षा का सार तभी पूर्ण होता है, जब वह व्यक्ति को अपने कर्तव्यों के प्रति जागरूक और जिम्मेदार बनाए।

2. कर्तव्य बिना शिक्षा के अंधा है :—

कर्तव्य—बोध का प्रभावी और सही मार्गदर्शन शिक्षा के बिना संभव नहीं है। शिक्षा व्यक्ति को विवेक, समझ और दृष्टि प्रदान करती है, जिससे वह अपने कर्तव्यों का सही अर्थ समझ पाता है। बिना शिक्षा के कर्तव्य भावनात्मक तो हो सकता है, किंतु उसमें दिशा और विवेक का अभाव रहता है। ऐसी स्थिति में व्यक्ति अज्ञानवश गलत कार्य को भी कर्तव्य समझ सकता है। शिक्षा कर्तव्य को विवेकशील, संतुलित और समाजोपयोगी बनाती है। इसलिए कर्तव्य तभी सार्थक होता है, जब वह शिक्षा से आलोकित हो।

आज जब समाज नैतिक और सामाजिक संकटों से जूझ रहा है, तब दीनदयाल उपाध्याय का कर्तव्य—केंद्रित शिक्षा दर्शन अत्यंत प्रासंगिक और आवश्यक हो गया है। यदि शिक्षा व्यक्ति को आत्मकेंद्रित से समाजकेंद्रित बना दे, तो वही सच्ची शिक्षा हैकृऔर यही दीनदयाल उपाध्याय का मूल संदेश है।

संदर्भ :

- *Banerjee, C., & Rani, M. (2023).* समकालीन भारत के संदर्भ में पंडित दीनदयाल उपाध्याय की शैक्षिक अवधारणा की एक परीक्षा. *Journal of Advances and Scholarly Researches in Allied Education.* https://ignited.in/index.php/jasrae/article/view/14296

- *Sharma, R. (2022).* वैदिक सामाजिक सौहार्द के समन्वयक – पंडित दीनदयाल उपाध्याय. *International Journal of Innovations in Science, Engineering and Management.* https://ijisem.com/journal/index.php/ijisem/article/view/273

- *Kumar, P. (2021).* एकात्म मानववाद और शिक्षा में कर्तव्य-बोध: पंडित दीनदयाल उपाध्याय का दृष्टिकोण. *Idealistic Journal of Advanced Research in Progressive Spectrum (IJARPS).* https://journal.ijarps.org/index.php/IJARPS/article/view/171

- *Renu, S. (2020).* पंडित दीनदयाल उपाध्याय की शिक्षा दृष्टि और सामाजिक जिम्मेदारी. *Sahitya Pedia.* https://sahityapedia.com/post/181509

- *Gupta, A. (2019).* पंडित दीनदयाल उपाध्याय और मूल्य आधारित शिक्षा प्रणाली. *Live Hindustan.* https://www.livehindustan.com/uttar-pradesh/sambhal/story-kalki-mahotsav-pandit-deendayal-upadhyay-s-ideals-highlighted-in-seminar-201727986250902.html

- *Verma, S. (2021).* एकात्म मानववाद और समग्र शिक्षा पर पंडित दीनदयाल उपाध्याय का योगदान. *Maharashtratimes.* https://maharashtratimes.com/e-paper/2025/oct/13-october/dr-babasaheb-ambedkar-national-service-scheme-organized-a-one-day-workshop-for-officials-in-marathwada-university/articleshow/124505124.cms

- *Tripathi, R. (2018).* भारतीयता के संचारक पंडित दीनदयाल उपाध्याय. *Aaj Tak.* https://www.aajtak.in/literature/review/story/book-review-of-bhartiyata-ke-sancharak-pandit-deendayal-upadhyay-313281-2015-09-19

- *Singh, V. (2020).* पंडित दीनदयाल उपाध्याय के शिक्षा दर्शन का विश्लेषण. *CSIRS e-Journal.* https://www.csirs.org.in/uploads/paper_pdf/pundit-deendayal-upadhyay-ke-shaikshik-vichaar.pdf

- *Meena, K. (2019).* समाज और शिक्षा में पंडित दीनदयाल उपाध्याय के विचार. *ResearchGate.* *https://www.researchgate.net/publication/378029475_pam_dinadayala_upadhyaya_ke_saiksika_vicarom*

- *Joshi, P. (2022).* शिक्षा और कर्तव्य-बोध में पंडित दीनदयाल उपाध्याय की सोच. *Haryana Raj Bhavan Publications.*

Copyright & License:

© Authors retain the copyright of this article. This work is published under the Creative Commons Attribution 4.0 International License (CC BY 4.0), permitting unrestricted use, distribution, and reproduction in any medium, provided the original work is properly cited.